

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 12 अध्याय 8: मार्कण्डेय की तपस्या

14 September 2026



दीर्घायु ऋषि मार्कण्डेय गहन तपस्या में निश्चल बैठे हैं, जबकि कामदेव, ऋतुएँ तथा दिव्य नर्तकियाँ उन्हें विचलित करने का व्यर्थ प्रयास करती हैं — तब भगवान् स्वयं नर और नारायण के रूप में अपने भक्त को आशीर्वाद देने प्रकट होते हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। यह वृत्तान्त पूर्ण कर चुकने के बाद कि वेद तथा पुराण किस प्रकार सुरक्षित रखे गए, सूत गोस्वामी अब ऋषि शौनक के एक हृदयस्पर्शी प्रश्न का उत्तर देते हैं — सर्वाधिक प्रसिद्ध ऋषियों में से एक के विषय में, मार्कण्डेय, जिनके विषय में कहा जाता है कि वे जगत् के प्रलय में भी जीवित रहते हैं। यह अष्टम अध्याय उस ऋषि की सुन्दर कथा खोलता है: उनकी आजीवन तपस्या तथा स्वाध्याय, मृत्यु पर उनकी विजय, इन्द्र द्वारा कामदेव तथा उसके मोहक परिकर से उनकी तपस्या भंग करने का असफल प्रयास, और अन्ततः भगवान् का नर तथा नारायण के युगल रूप में कृपापूर्वक प्रकट होना। अध्याय मार्कण्डेय की कोमल शरणागति-स्तुति के साथ समाप्त होता है — एक स्तुति जो आगे के अध्यायों में भगवान् की अपनी अचिन्त्य माया के दर्शन तक ले जाएगी।

अध्याय-पारेचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 12 (द्वादश स्कन्ध — अन्तिम स्कन्ध)
- अध्याय: 8 (अष्टम अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: मार्कण्डेय की तपस्या तथा नर-नारायण की स्तुति
- मुख्य वक्ता: सूत गोस्वामी, नैमिषारण्य के ऋषियों को कथा सुनाते हुए; इसके भीतर मार्कण्डेय की स्तुति
- मुख्य श्रोता: नैमिषारण्य के ऋषिगण, शौनक के नेतृत्व में
- मुख्य स्थान: नैमिषारण्य का वन-आश्रम; तथा कथा के भीतर उत्तर हिमालय में पुष्पभद्रा नदी के तट पर मार्कण्डेय का आश्रम
- मुख्य विषय-वस्तु: दीर्घायु मार्कण्डेय के विषय में शौनक का प्रश्न, ऋषि की तपस्या तथा मृत्यु पर विजय, कामदेव द्वारा इन्द्र का असफल परीक्षण, तथा नर-नारायण का प्रकट होना
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 12, अध्याय 8, श्लोक 1-49
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

शौनक का प्रश्न

ऋषिश्रेष्ठ शौनक स्नेह तथा श्रद्धा से सूत को सम्बोधित करते हैं: “हे सूत, हे वक्ताओं में रत्न, आप दीर्घायु हों! सांसारिक अस्तित्व के अनन्त अन्धकार में भटकते जनों को मार्ग केवल आप ही दिखा सकते हैं।” फिर वे अपना संशय सूत के समक्ष रखते हैं। लोग मृकण्डु-पुत्र मार्कण्डेय को अत्यन्त दीर्घायु ऋषि कहते हैं, जो ब्रह्मा के एक दिन के अन्त में, जब सम्पूर्ण विश्व प्रलय में लीन हो गया, तब भी जीवित रहे। किन्तु, शौनक कहते हैं, यह मार्कण्डेय तो वर्तमान कल्प में तथा शौनक के अपने ही वंश में उत्पन्न हुए, और इस कल्प में कोई सार्वभौम प्रलय हुआ ही नहीं। यह भी कहा जाता है कि, एकाकी विश्वव्यापी जल पर बहते हुए, उन्होंने भगवान् को एक अद्भुत शिशु के रूप में वटपत्र पर शयन करते देखा। “यह हमारे लिए महान् संशय का विषय है,” शौनक कहते हैं; “इसका समाधान कीजिए, हे महायोगी, पुराणों के ज्ञान हेतु भी सम्मानित आप।”

वह तपस्या जिसने मृत्यु को जीता

सूत उत्तर देते हैं कि यही जिज्ञासा एक व्यापक भ्रान्ति को दूर करने के लिए है, और इसका उत्तर देने हेतु श्रीनारायण की पवित्र कथा सुनानी होगी। तब वे मार्कण्डेय का जीवन उघाड़ते हैं। अपने पिता से यज्ञोपवीत-संस्कार पाकर तथा धर्मपूर्वक वेदों का अध्ययन करके, मार्कण्डेय तप तथा ज्ञान से सम्पन्न हुए। आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन करते, विकाररहित, वे जटा, वृक्षों की छाल तथा मुञ्ज-मेखला धारण करते और दण्ड, कमण्डलु, कृष्णमृगचर्म तथा रुद्राक्ष की माला रखते थे। प्रातः तथा सायं वे श्रीहरि की उपासना अग्नि, सूर्य, गुरु तथा ब्राह्मणों के माध्यम से, और अपने भीतर भगवान् का चिन्तन करके, करते थे।

प्राप्तद्विजातिसंस्कारो मार्कण्डेयः पितुः क्रमात् ।
 छन्दांस्यधीत्य धर्मेण तपःस्वाध्यायसंयुतः ॥ ७ ॥
 बृहद्व्रतधरः शान्तो जटिलो वल्कलाम्बरः ।
 बिभ्रत् कमण्डलुं दण्डमुपवीतं समेखलम् ॥ ८ ॥
 कृष्णाजिनं साक्षसूत्रं कुशांश्च नियमद्वये ।
 अग्न्यर्कगुरुविप्रात्मस्वर्चयन् सन्ध्योर्हरिम् ॥ ९ ॥
 सायं प्रातः स गुरवे भैक्ष्यमाहृत्य वाग्यतः ।
 बुभुजे गुर्वनुज्ञातः सकृन्नो चेदुपोषितः ॥ १० ॥
 एवं तपःस्वाध्यायपरो वर्षाणामयुतायुतम् ।
 आराधयन् हृषीकेशं जिग्ये मृत्युं सुदुर्जयम् ॥ ११ ॥

*prāpta-dvijāti-saṁskāro mārkaṇḍeyaḥ pituḥ kramāt chandāṁsy adhītya dharmeṇa tapaḥ-
 svādhyāya-saṁyutaḥ bṛhad-vrata-dharaḥ śānto jaṭilo valkalāmbaraḥ bibhrat kamaṇḍalum
 daṇḍam upaviṭam sa-mekhalam kṛṣṇājinaṁ sākṣa-sūtram kuśāṁś ca niyamarddhaye agny-arka-
 guru-viprātmasv arcayan sandhyayor harim sāyaṁ prātaḥ sa gurave bhaikṣyam āhṛtya vāg-
 yataḥ bubhuje gurv-anujñātaḥ sakṛn no ced upoṣitaḥ evaṁ tapaḥ-svādhyāya-paro varṣāṇām
 ayutāyutam ārādhayan hṛṣīkeśam jigye mṛtyum su-durjayam*

अर्थः यथासमय पिता से द्विज-संस्कार पाकर, मार्कण्डेय ने धर्मपूर्वक वेदों का अध्ययन किया और तप तथा स्वाध्याय से सम्पन्न हुए। बृहद ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करते, शान्त, जटा तथा वल्कल-वस्त्र धारण किए, कमण्डलु, दण्ड, यज्ञोपवीत तथा मेखला, कृष्णमृगचर्म, माला तथा नियम की सिद्धि हेतु कुश रखते हुए, उन्होंने प्रातः-सायं अग्नि, सूर्य, गुरु, ब्राह्मणों तथा आत्मा के माध्यम से श्रीहरि की उपासना की। गुरु के लिए प्रातः-सायं भिक्षा लाकर वे तभी भोजन करते जब अनुमति मिलती, अन्यथा उपवास करते; और इस प्रकार तप तथा स्वाध्याय में लीन, दस हजार गुणित दस हजार वर्षों तक हृषीकेश की उपासना करते हुए, उन्होंने अत्यन्त दुर्जय मृत्यु को जीत लिया। (स्कन्ध 12, अध्याय 8, श्लोक 7-11)



वलकल तथा जटा धारण किए, मार्कण्डेय प्रातः-सायं यज्ञाग्नि के माध्यम से श्रीहरि की उपासना करते हैं, और दीर्घ तप तथा स्वाध्याय से मृत्यु को ही जीत लेते हैं (श्लोक 7-11)।

ब्रह्मा, शिव, भृगु, दक्ष तथा ब्रह्मा के अन्य पुत्र — और मनुष्य, देव तथा पितर सभी — इस असाधारण उपलब्धि से विस्मित हो उठे। श्रीहरि के ध्यान में लीन, समस्त आन्तरिक विघ्नों के नष्ट हो जाने पर, ऋषि छह मन्वन्तरों तक अखण्ड चिन्तन में डूबे रहे।

कामदेव के माध्यम से इन्द्र का परीक्षण

यह जानकर तथा ऋषि की तपस्या की विशालता से भयभीत होकर, इन्द्र अपने सिंहासन के लिए चिन्तित हो उठे और तपस्या भंग करने का संकल्प किया। उन्होंने ऋषि के आश्रम में गन्धर्वों तथा अप्सराओं, कामदेव, वसन्त ऋतु के देवता, सुगन्धित दक्षिण-पवन, तथा लोभ एवं मद तक को भेजा। वे मार्कण्डेय के सुन्दर आश्रम में आए, जो हिमालय के उत्तरी ढलानों पर था, जहाँ पुष्पभद्रा नदी चित्र नामक शिला के पास बहती है — एक पावन स्थान, पवित्र वृक्षों तथा सरोवरों से सुशोभित, मत्त भ्रमरों की गुंजार तथा कोयल के गान और मयूरों के नृत्य से आनन्दित।

वसन्त अपनी चाँदनी सन्ध्याओं तथा पुष्पित लताओं के साथ प्रकट हुआ; कामदेव धनुष-बाण लिए, दिव्य गायकों तथा नर्तकियों के दलों के साथ आया। उन्होंने ऋषि को अपनी यज्ञाग्नि के निकट बन्द नेत्रों से बैठे पाया, मनुष्य-रूप में अग्नि-सा भयंकर। नर्तकियाँ नाचीं और गायक गाए; कामदेव ने अपना पञ्चबाण धनुष पर चढ़ाया; और अप्सरा पुञ्जिकस्थली ऋषि के समक्ष तब तक क्रीड़ा करती रही जब तक पवन उसका वस्त्र न उड़ा ले गया। किन्तु ऋषि को पहले से ही जीता हुआ मानकर कामदेव ने अपना बाण छोड़ा — और, दुर्भाग्यशाली मनुष्य के प्रयास-सा, उसका समस्त उद्यम ऋषि के समक्ष पूर्णतः व्यर्थ सिद्ध हुआ। मार्कण्डेय के तेज से झुलसकर, वे उन बालकों-से भाग गए जो सर्प को छेड़कर भागते हैं। इस प्रकार आक्रान्त होने पर भी, महान् ऋषि अहंकार के वश नहीं हुए — जो, सूत टिप्पणी करते हैं, महान् आत्माओं के लिए कोई आश्चर्य की बात नहीं।

नर तथा नारायण का प्रकट होना

तप, स्वाध्याय तथा संयम से इस प्रकार लीन उस ऋषि पर कृपा बरसाने के लिए, भगवान् श्रीहरि उनके समक्ष नर तथा नारायण के युगल रूप में प्रकट हुए।

तस्यैवं युज्जतश्चित्तं तपःस्वाध्यायसंयमैः ।

अनुग्रहायाविरासीन्नरनारायणो हरिः ॥ ३२ ॥

tasyaivam yuñjataś cittam tapaḥ-svādhyāya-samyamaiḥ anugrahāyāvirāsīn nara-nārāyaṇo hariḥ

अर्थ: जब मार्कण्डेय इस प्रकार तप, स्वाध्याय तथा संयम से अपने मन को स्थिर कर रहे थे, तब भगवान् हरि कृपा प्रदान करने हेतु उनके समक्ष नर तथा नारायण के रूप में प्रकट हुए। (स्कन्ध 12, अध्याय 8, श्लोक 32)



भगवान् श्रीहरि लीन ऋषि के समक्ष नर तथा नारायण के युगल रूप में प्रकट होते हैं — गौर तथा श्याम, चतुर्भुज, विद्युत्-से देदीप्यमान, तप के साक्षात् विग्रह (श्लोक 32)।

देवाधीश्वरों के भी आराध्य वे दोनों भगवान् गौर तथा श्याम वर्ण के थे, नेत्र नवविकसित कमल-से, प्रत्येक चतुर्भुज, कृष्णमृगचर्म तथा वल्कल धारण किए, कुश की अँगूठियाँ तथा त्रिवृत् यज्ञोपवीत पहने, और कमण्डलु, दण्ड तथा तपस्वी की कुश-मुष्टि लिए हुए। ऊँचे, विद्युत्-से स्वर्णिम, वे तप के दो साक्षात् विग्रह-से प्रतीत होते थे। मार्कण्डेय उठ खड़े हुए, दण्ड-से भूमि पर गिरकर प्रणाम किया, और, आनन्द से रोमांचित देह, पुलकित तथा अश्रुपूर्ण नेत्रों से, उन्हें भर आँख देख भी न सके। जुड़े हाथों से उन्होंने उनका अभिवादन किया, आसन दिया, चरण धोए, और चन्दन, धूप तथा पुष्पमालाओं से उनकी पूजा की।

मार्कण्डेय की शरणागति-स्तुति

उनके चरणों में नमन करके, मार्कण्डेय ने स्तुति की। वे पूछते हैं, वे भला भगवान् की स्तुति कैसे करें, जिनकी प्रेरणा-मात्र से प्रत्येक प्राणी के — यहाँ तक कि ब्रह्मा तथा शिव के भी — प्राण, वाणी, मन तथा इन्द्रियाँ क्रियाशील होती हैं, और जो फिर भी अपने उपासकों की आत्मा के सच्चे मित्र-सा व्यवहार करते हैं? नर तथा नारायण के ये युगल रूप, वे कहते हैं, तीनों लोकों के कल्याण तथा मुक्ति के लिए प्रकट हैं। वे घोषणा करते हैं कि कर्म के मल, तीनों गुण तथा स्वयं काल उसे कभी दूषित नहीं कर सकते जो भगवान् के चरणों की शरण लेता है — वे ही चरण जिन्हें ज्ञानी ऋषि स्तवन, पूजन तथा ध्यान करते हैं। और वे स्वीकार करते हैं कि इससे अन्य कोई सुरक्षित आश्रय वे नहीं जानते।

नान्यं तवाङ्घ्र्युपनयादपवर्गमूर्तेः
क्षेमं जनस्य परितोभिय ईश विद्मः ।
ब्रह्मा बिभेत्यलमतो द्विपरार्धधिष्ण्यः
कालस्य ते किमुत तत्कृतभौतिकानाम् ॥ ४३ ॥

*nānyam tavāṅghry-upanayād apavarga-mūrteḥ kṣemaṁ janasya parito-bhiya īśa vidmaḥ
brahmā bibhety alam ato dvi-parārdha-dhiṣṇyaḥ kālasya te kim uta tat-kṛta-bhautikānām*

अर्थ: हे प्रभो, हे अपवर्ग (मुक्ति) के विग्रह, चारों ओर से भयग्रस्त जनों के लिए हम आपके चरणों में लाए जाने के अतिरिक्त कोई सुरक्षित आश्रय नहीं जानते; क्योंकि दो परार्ध तक राज्य करने वाले ब्रह्मा भी आपके काल-स्वरूप से अत्यन्त भयभीत रहते हैं — तब उनके रचे प्राणियों की तो बात ही क्या? (स्कन्ध 12, अध्याय 8, श्लोक 43)



जुड़े हाथों तथा अश्रुपूर्ण नेत्रों से, मार्कण्डेय भगवान् के चरणों की शरण लेते हैं, यह घोषणा करते हुए कि समस्त प्राणियों को घेरने वाले भय से अन्य कोई आश्रय नहीं (श्लोक 43)।

देह तथा उससे जुड़ी सब वस्तुओं की आसक्ति से मुख मोड़कर, मार्कण्डेय परम की शरण लेते हैं। वे कहते हैं कि यद्यपि भगवान् अपनी लीलाओं हेतु तीनों गुण — सत्त्व, रजस् तथा तमस् — धारण करते हैं, तथापि उनका सात्त्विक रूप, जो उनके भक्तों को इतना प्रिय है, वही शाश्वत शान्ति की ओर ले जाता है। इसलिए वे बार-बार उन भगवान् को प्रणाम करते हैं जो नर तथा नारायण के रूप में प्रकट हैं, विश्व के अन्तर्यामी तथा प्रवर्तक, जिनका सच्चा स्वरूप केवल उन्हीं के प्रकट किए वेद से झलकता है।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. भगवान् की ओर लक्षित तपस्या मृत्यु को भी जीत लेती है। मार्कण्डेय की मृत्यु पर विजय केवल सहनशक्ति से नहीं, अपितु अग्नि, सूर्य, गुरु तथा आत्मा के माध्यम से श्रीहरि की अखण्ड भक्ति से आई (श्लोक 7-11)।

2. ईश्वर में स्थिर आत्मा को प्रलोभन छू भी नहीं सकता। कामदेव तथा उसके समस्त मोह भगवान् में लीन ऋषि के समक्ष विफल हुए — और, उल्लेखनीय रूप से, ऋषि अपनी दृढ़ता पर अभिमान तक न किया (श्लोक 16-30)।

3. भगवान् अपने भक्त पर कृपा हेतु स्वयं प्रकट होते हैं। नर तथा नारायण इसलिए नहीं प्रकट हुए कि मार्कण्डेय ने कोई वर माँगा, अपितु उनमें लीन एक भक्त के प्रति शुद्ध कृपा के कारण (श्लोक 32)।

4. भय से अन्य कोई आश्रय नहीं। ब्रह्मा तक काल-स्वरूप से भयभीत रहते हैं; चारों ओर से भयग्रस्त प्राणियों के लिए एकमात्र आश्रय भगवान् के चरण हैं (श्लोक 43)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

मार्कण्डेय की कथा में कुछ गहरा आश्वासन है। यहाँ एक ऐसी आत्मा है जिसने मृत्यु को किसी चतुर उपाय से या जगत् से पलायन करके नहीं जीता, अपितु ईश्वर से इतना पूर्ण और इतने दीर्घ काल तक प्रेम करके जीता कि मृत्यु की पकड़ ही ढीली पड़ गई। और जब महान् परीक्षा आई — कष्ट की नहीं, अपितु सुख की, कामदेव तथा उसके चकाचौंध परिकर के रूप में — तब उन्हें किसी कठोर आत्म-दमन ने नहीं, अपितु भगवान् में उनकी लीनता ने अछूता पार कराया। सबसे मार्मिक वह है जो बाद में नहीं हुआ: उन्होंने स्वयं को बधाई नहीं दी। भागवत कोमलता से बताता है कि महान् आत्माएँ इस जाल में गिरती ही नहीं। और तब पूरे अध्याय का कोमल विपर्यय आता है: भगवान्, बिना माँगे, प्रकट होते हैं — क्योंकि अपनी ओर पूर्णतः मुड़े हृदय के प्रति दिव्यता की स्वाभाविक प्रतिक्रिया निकट आना ही है। मार्कण्डेय की स्तुति हमें सिखाती है कि सच्ची सुरक्षा कहाँ है। स्वास्थ्य, धन, या दीर्घ जीवन में भी नहीं, अपितु “आपके चरणों में लाए जाने” में। जब ब्रह्मा तक काल के समक्ष काँपते हैं, तब भगवान् में शरण ली हुई छोटी-सी आत्मा के पास डरने को कुछ शेष नहीं रहता।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज मार्कण्डेय से एक छोटी शिक्षा अपने दिन में लीजिए। प्रातः या सायं — उन्हीं पावन सन्धि-वेलाओं में जिनका ऋषि सम्मान करते थे — कुछ शान्त क्षणों के लिए ठहरिए और भगवान् की एक सरल उपासना अर्पित कीजिए: एक दीप या धूप जलाइए, या केवल हाथ जोड़िए, और सूर्य के प्रकाश में, अपने गुरुओं में, तथा अपने ही हृदय में विद्यमान श्रीहरि का स्मरण कीजिए। फिर, यह स्मरण करते हुए कि ब्रह्मा तक काल से भयभीत रहते हैं जबकि भगवान् के चरणों में स्थित भक्त नहीं, अपनी वहन की हुई एक चिन्ता को कोमलता से उन चरणों में रखकर वहीं छोड़ दीजिए। अन्त में “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय” का एक निश्चित संख्या में जप कीजिए। ईश्वर की ओर इस छोटी दैनिक मुड़ान में वही बीज है जो, मार्कण्डेय में, एक ऐसी भक्ति बन गया जिसे मृत्यु भी परास्त न कर सकी।

उपसंहार

द्वादश स्कन्ध का अष्टम अध्याय ऋषि मार्कण्डेय की देदीप्यमान कथा खोलता है। जगत् के प्रलय में भी जीवित रहने वाले उस ऋषि के विषय में शौनक के प्रश्न के उत्तर में, सूत बताते हैं कि किस प्रकार मार्कण्डेय ने आजीवन ब्रह्मचर्य, स्वाध्याय तथा श्रीहरि की उपासना से मृत्यु को ही जीत लिया; किस प्रकार इन्द्र का कामदेव तथा उसके दिव्य परिकर से तपस्या भंग करने का प्रयास ईश्वर में लीन आत्मा के समक्ष पूर्णतः विफल हुआ; और किस प्रकार भगवान् ने, अपनी निर्हेतुक अनुकम्पा से, उस तेजस्वी ऋषि-युगल नर-नारायण का स्वरूप धारण कर उसे साक्षात्कार प्रदान

किया। अध्याय ऋषि की शरणागति-स्तुति के साथ समाप्त होता है — इस अनुभूति के साथ कि जब ब्रह्मा तक काल-स्वरूप से भयभीत रहते हैं, तब एकमात्र सच्चा आश्रय भगवान् के चरण हैं। यह एक ऐसी कथा है जो शक्ति की हमारी धारणा को चुपचाप पुनः आँकती है: सबसे बलशाली आत्मा वह नहीं जो सर्वाधिक प्रतिरोध करती है, अपितु वह जो सर्वाधिक पूर्णता से ईश्वर की शरण ले चुकी है।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जागृत करे।

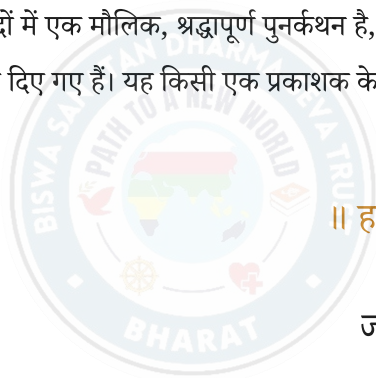
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (सम्पूर्ण), द्वादश स्कन्ध, अष्टम अध्याय।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज्ञान · बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ॰ श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश-रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या भाष्य का पुनरुत्पादन नहीं है।



॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-12-adhyay-8-markandeya-tapasya-narayan-narayana-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञान · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट